

## भोजपुरी लोकगीतों में प्रवासन की पीड़ा: एक सामाजिक और सांस्कृतिक अध्ययन

यशवंत कुमार सिंह

शोधार्थी, स्नातकोत्तर भोजपुरी विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, बिहार, भारत

### सारांश

भोजपुरी क्षेत्रों का लोकसाहित्य प्रवासन के अनुभवों का एक सशक्त सांस्कृतिक दस्तावेज़ है। आर्थिक विवशता, कृषि संकट और सीमित स्थानीय अवसरों के कारण भोजपुरी क्षेत्र में से लोगों का बड़े शहरों तथा परदेसों में प्रवासन लंबे समय से होता रहा है। इस सामाजिक यथार्थ का प्रतिबिंब भोजपुरी लोकगीतों में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, जहाँ प्रवासी पुरुष की मानसिक पीड़ा, अकेलापन और अस्मिता-संकट को मार्मिक अभिव्यक्ति मिली है। भोजपुरी लोकसाहित्य समाज की सामूहिक चेतना, ऐतिहासिक अनुभव और भावनात्मक संरचना का अनौपचारिक अभिलेख होता है। लिखित इतिहास जहाँ सत्ता, नीतियों और संस्थाओं को केंद्र में रखता है, वहीं लोकगीत आम जन के जीवन-संघर्ष, पीड़ा और आकांक्षाओं को स्वर देते हैं। भोजपुरी लोकगीत इसी परंपरा का सशक्त उदाहरण हैं। भोजपुरी लोकगीत प्रवासन पीड़ा का सबसे सशक्त माध्यम है। "बिदेसिया", "चौता", "कजरी" और सोहर में प्रदेश गए पति, बेटा, या प्रिये का इंतजार, स्त्री-मन के अकेलापन और टूटते पारिवारिक ढांचे का मार्मिक चित्रण है।

**मूल शब्द:** लोकगीत, प्रवासन, मजदूर, मॉरीशस, बिदेसिया

### प्रस्तावना

प्रवासन मानव सभ्यता का अभिन्न अंग रहा है। भोजपुरी अंचल में प्रवासन केवल एक सामाजिक प्रक्रिया नहीं, बल्कि एक स्थायी जीवन-अनुभव रहा है। पीढ़ियों से इस क्षेत्र के लोग आजीविका के लिए "परदेस" जाते रहे हैं। इस परदेस-गमन ने आर्थिक संरचना को तो बदला, पर साथ ही पारिवारिक, भावनात्मक और सांस्कृतिक स्तर पर गहरी चोट भी की। इस चोट की सबसे मार्मिक अभिव्यक्ति भोजपुरी लोकगीतों में मिलती है। भोजपुरी लोकगीत केवल मनोरंजन का साधन ही नहीं, बल्कि यह जनसामान्य का इतिहास, संघर्ष और संवेदना की मौखिक दस्तावेज़ है।

### भोजपुरी क्षेत्र और प्रवासन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

भोजपुरी क्षेत्र ऐतिहासिक रूप से कृषि-प्रधान रहा है। सीमित भूमि, परंपरागत खेती, मानसून पर निर्भरता और जनसंख्या वृद्धि ने आजीविका के संकट को जन्म दिया। औपनिवेशिक काल में ब्रिटिश शासन की नीतियों ने इस संकट को और गहरा किया। रेलवे, चाय-बागान और औद्योगिक नगरों के विकास के लिए श्रम की भारी मांग पैदा हुई, जिसका सीधा प्रभाव भोजपुरी क्षेत्र पर पड़ा (Pandey 112)।<sup>1</sup>

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से बड़ी संख्या में भोजपुरी भाषी लोग कलकत्ता, असम, बंबई और यहाँ तक कि मॉरीशस, फिजी और सूरीनाम तक ले जाए गए। यह प्रवासन अक्सर अस्थायी माना जाता था, पर धीरे-धीरे यह स्थायी सामाजिक यथार्थ बन गया। इस प्रवासन का पीड़ा सबसे अधिक महिलाओं को झेलना पड़ा, जो लोकगीत के रूप में अपना दुख, प्रतीक्षा और विरोध दर्ज करती रहती हैं।

मॉरीशस के कवि मधुकर जी के कविता में भारत से मॉरीशस गए मजदूरों की मनोदशा का साफ-साफ चित्रण किया गया है। भारत से मॉरीशस गए मजदूरों की कहानी बहुत ही दुख भरी हुई है। उन लोगों को अंग्रेजों ने धोखा से कई तरह के लालच देकर मॉरीशस ले गए। वहाँ जाने के बाद उन लोगों को बहुत सारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। उन्हीं लोगों के बीच से वजेन्द्र भगत 'मधुकर' आये थे। प्रवासन के पीड़ा का दर्द मधुकर जी इस गीत के माध्यम से बहुत ही मार्मिक ढंग से लिखे हैं -  
सोनवा के लोभवा में देसवा बिसरिले हो

सोना सुन मरीचिया के नाम,  
सुन के कि पग पग सोना सवा सेर मिली  
करे के ना परी कवनों काम,  
खाय के मुफत मिली माखन, मिटाइ मेवा  
पिये खातिर दुधवा बदाम,  
नरम नरम मिली सुते के गलइचा हो  
परी करी चाकरी सलाम।  
अइते मरीचिया में सोनवा सुदेहिया से  
बंधल गुलमिया जंजीर,  
खाइ के त रात दिन लौर गारी, लात मिलल  
पिये के नयनवा के नीर,  
माहुर माहुर भरल गोरवा के बतिया हो  
बिंधले करेजवा में तीर,  
ऊखवा के खेतवा में गल गइले सोनबा के  
सोनवा समनवा सरीर।  
परती जमीनिया में ऊखवा उगाइके हो  
सोनवा भरले खलिहान।  
लहुआ के बुंदवा से सिंचले मरीचिया हो  
सोना नीयर कतने जवान।  
बीर नीयर काम कइले कुलियन के बाँके लाल  
भारत के गरब गुमान।  
जेकरा कारन आज देसवा अजाद भइले  
चौरंगिया उड़े आसमान (मधुकर)।<sup>2</sup>

भारतीय मजदूरों को किस तरह प्रलोभन देकर अंग्रेजों मॉरीशस ले गये और वहाँ जाने के बाद जी तरह का यातना एवं पीड़ा सहना पड़ा, वजेन्द्र भगत 'मधुकर' अपनी इस गीत में लिखे हैं। लोकगीतों में यह इतिहास किसी तिथि या आँकड़े के रूप में नहीं, बल्कि टूटते घरों और सूनी चौखटों के रूप में दर्ज हुआ।

### भोजपुरी लोकगीतों की परंपरा और सामाजिक भूमिका

भोजपुरी लोकगीत प्रवासन पीड़ा का सबसे सशक्त माध्यम है। "बिदेसिया", "चौता", "कजरी" और सोहर में प्रदेश गए पति, बेटा, या प्रिये का इंतजार, स्त्री-मन के अकेलापन और टूटते पारिवारिक ढांचे का मार्मिक चित्रण है। जैसे-

“पिया गइले कलकत्ता हो, सून भइल आँगनवा”

इस पंक्ति में बिछोह के साथ सामाजिक रिक्कता का भाव छूपा है।

लोकगीतों में स्त्री का स्वर प्रमुख है, जो प्रवासन के लिंगगत पीड़ा को उजागर करता है। यह पीड़ा व्यक्तिगत नहीं, सामूहिक बन जाता है।

भोजपुरी लोकगीत जीवन के हर संस्कार और अवस्था से जुड़े हैं—जन्म (सोहर), विवाह (कजरी, विवाह गीत), ऋतु परिवर्तन (चौता) और श्रम (झूमर)। इन गीतों की विशेषता यह है कि वे सामूहिक रूप से गाए जाते हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक परंपरा से आगे बढ़ते हैं (Tiwari 54)।<sup>13</sup>

प्रवासन की पीड़ा विशेष रूप से उन गीतों में उभरती है जिन्हें स्त्रियाँ गाती हैं। ये गीत निजी दुःख को सामूहिक अनुभव बना देते हैं। यही कारण है कि भोजपुरी लोकगीत केवल भावुक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि सामाजिक दस्तावेज़ भी हैं।

### “बिदेसिया” की अवधारणा और प्रवासन का लोकबोध

भोजपुरी लोक संस्कृति में “बिदेसिया” शब्द एक गहरे सामाजिक अर्थ को समेटे हुए है। बिदेसिया वह पुरुष है जो रोजगार के लिए घर छोड़कर परदेस गया है। लोकगीतों में बिदेसिया केवल एक व्यक्ति नहीं, बल्कि एक स्थिति है— अनुपस्थिति की स्थिति भिखारी ठाकुर के गीतों में प्रवासन का मूल कारण गरीबी, जमींदारी शोषण, और रोजगार का अभाव रहा है। ‘बिदेसिया’ परंपरा में परदेस गये पुरुष श्रमिक केवल मजदूर नहीं, बल्कि टूटते परिवार के प्रतीक बन जाते हैं। भिखारी ठाकुर के गीतों में शहर “मोहक लेकिन निर्दयी” रूप में उभर कर आता है, जहाँ कमायी तो होता है, लेकिन आत्मीयता नहीं मिलता है।

भिखारी ठाकुर के गीतों में बार—बार यह प्रश्न उभरता है कि परदेस जाना मजबूरी है या विकल्प। स्त्री अपने पति से शिकायत भी करती है और उसकी मजबूरी को समझती भी है। यह द्वंद्व भोजपुरी लोकगीतों को अत्यंत मानवीय बनाता है (Shukla 48)।<sup>14</sup>

### स्त्री—वेदना: विरह, असुरक्षा और सामाजिक दबाव

भिखारी ठाकुर का प्रवासन—केन्द्रित गीतों के सबसे मार्मिक पक्ष स्त्री—अनुभव है। परदेस गये पति का इंतजार, आर्थिक असुरक्षा और सामाजिक अकेलापन— इन सब गीतों में बार—बार उभर कर सामने आता है।

1. पिया गइलें कलकत्ता हो राम  
छूट गइल सगरी बतिया हो राम।  
अंगना सूना, सून घर—दुआर,  
रोवे सजनिया दिन—रात हो राम।
2. काहे गइलें बिदेस पिया,  
छूट गइल देस—परदेस हो राम।  
माया—ममता, मइया—बाबू,  
सब कुछ छोड़ गइलें हो राम।
3. चिठिया लिख—लिख भेजे पिया,  
आँखिन बहावे नीर हो राम।  
सांझ पड़े तो बाटे राह,  
कब लौटिहें बिदेसिया हो राम।
4. रेलिया चले कलकत्ता हो,  
ले गइल साजन प्रान हो राम।  
भूख गरीबी मारल देस,  
किस्मत बनावे गइलें हो राम।

उदाहरण के लिए, बिदेसिया गीतों में नायिका कहती है कि “साजन गइलन बिदेस, सूना पड़ल आँगना”— यह केवल व्यक्तिगत दुख नहीं, बल्कि सामूहिक स्त्री—पीड़ा का स्वर है। भिखारी ठाकुर स्त्रियों को निष्क्रिय पीड़िता नहीं, बल्कि संवेदनशील सामाजिक पात्र के रूप में प्रस्तुत करते हैं, जो व्यवस्था पर मौन प्रश्न खड़ा करता है।

प्रवासन की पीड़ा का सबसे गहन रूप स्त्री—वेदना में दिखाई देता है। भोजपुरी लोकगीतों में स्त्री अकेलेपन, सामाजिक संदेह, आर्थिक असुरक्षा और भावनात्मक टूटन से जूझती हुई दिखाई देती है।

पति की अनुपस्थिति में स्त्री केवल भावनात्मक साथी नहीं खोती, बल्कि सामाजिक सुरक्षा भी खो देती है। लोकगीतों में ससुराल, समाज और रिश्तेदारों के तानों का उल्लेख मिलता है। यह पीड़ा केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि संरचनात्मक है।

स्त्री कई गीतों में सीधे सवाल करती है— क्या परदेस की कमाई उसके सूने आँगन से बड़ी है? यह प्रश्न लोकगीतों को सामाजिक आलोचना का स्वर प्रदान करता है (Prasad 139)।<sup>15</sup>

कुछ लोकगीतों में स्त्री केवल पीड़िता नहीं, बल्कि प्रश्नकर्ता भी है—

“का कमाई पिया शहर में  
जे सूना पड़े देस?”

इस तरह का गीत प्रवासन का एकतरफा महिमा मंडप का खंडन करता है और गाँव की टूटी हुई सामाजिक ढाँचा पर सवाल उठाता है

भोजपुरी लोकगीतों में प्रवासन का सबसे प्रबल पक्ष विरह है। गीतों में महिलाओं की आवाज प्रमुख है – वह पत्नी, प्रेमिका, भाभी या माँ के रूप बोलती हैं।

“पिया गइलन परदेस, सूना पड़ गइल अँगना  
सावन आइल, भिजे ना मोर कंगना”

इस तरह पंक्तियों में प्रेम के दुख के साथ सामाजिक अकेलापन, यौन—सुरक्षा और भावनात्मक शून्यता का संकेत है।

प्रवासन से स्त्री पर सामाजिक जिम्मेदारी बढ़ जाती है। वह घर भी संभालती है, इज्जत भी ढोती है और प्रतीक्षा भी करती है। लोकगीतों में बार—बार इस बात का उल्लेख है कि समाज स्त्रियों से धैर्य, त्याग और मौन का अपेक्षा करता है।

“लोग कहे धीरज धर, सास कहे लाज बचा  
केहू ना पूछे, रात कटे केतना सजा”

इस गीत में स्त्री की अंदरूनी संघर्ष सामने आती है, जो अक्सर सामाजिक बातचीत में दबा दिया जाता है।

प्रवासन पीड़ा से जुड़ा लोकगीत पीढ़ी दर पीढ़ी गया जाता है। यह गीत सामाजिक स्मृति (Collective Memory) का निर्माण करता है, जहाँ व्यक्तिगत दुख सामाजिक अनुभव में बदल जाता है (Shukla 117)।<sup>16</sup>

आज भोजपुरी गीतों में भी यह पीड़ा नया संगीत रूप में मौजूद है, हालांकि बाजारीकरण के कारण भावनात्मक गहराई कुछ कम हुआ है। भोजपुरी लोकगीतों में प्रवासन पीड़ा केवल अतीत की कहानी नहीं, बल्कि आज भी सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति है। यह गीत भोजपुरिया समाज की संवेदनशील इतिहास, स्त्री—अनुभव और सांस्कृतिक प्रतिरोध का जीवंत दस्तावेज़ है।

### पुरुष प्रवासी की मानसिक पीड़ा

भोजपुरी लोकगीतों में प्रवासी पुरुष प्रायः “परदेसिया” के रूप में उपस्थित होता है। यह परदेस केवल भौगोलिक दूरी का संकेत नहीं है, बल्कि भावनात्मक और मानसिक विच्छेदन का भी प्रतीक है। गीतों में बार-बार घर, माँ, पत्नी और गाँव की स्मृतियाँ उभरती हैं, जो प्रवासी पुरुष के भीतर एक स्थायी रिक्तता को जन्म देती हैं। यह मानसिक स्थिति आधुनिक मनोविज्ञान के “नॉस्टैल्जिक ट्रॉमा” से मेल खाती है, जहाँ व्यक्ति भूतकाल से जुड़कर वर्तमान में स्वयं को असहाय महसूस करता है।

प्रवासी पुरुष की पीड़ा का एक महत्वपूर्ण पक्ष उसकी मर्दानगी से जुड़ा दबाव है। लोकगीतों में वह परिवार का पालनकर्ता है, जिससे अपेक्षा की जाती है कि वह अपने दुख को व्यक्त न करे। परिणामस्वरूप, उसकी मानसिक वेदना दबे स्वर में, प्रतीकों और बिंबों के माध्यम से प्रकट होती है—जैसे सूना आँगन, सूखी खेती या लंबी रेल यात्रा। यह चुप्पी स्वयं में एक गहरी मानसिक त्रासदी को दर्शाती है।

कई गीतों में महानगर की अमानवीय परिस्थितियाँ भी उभरती हैं। फ़ैक्टरी, निर्माण स्थल या भीड़भाड़ वाली बस्तियाँ प्रवासी पुरुष को एक मशीन में बदल देती हैं। यहाँ उसकी पहचान श्रम तक सीमित हो जाती है। लोकगीत इस अमानवीकरण की प्रक्रिया को भावनात्मक स्तर पर उजागर करते हैं, जहाँ प्रवासी अपने अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न लगाता है—“हम कौन बानी?” जैसी पंक्तियाँ उसकी अस्मिता-संकट को स्वर देती हैं।

ध्यान देने योग्य है कि भोजपुरी लोकगीत केवल करुणा का आख्यान नहीं हैं, बल्कि वे सामूहिक प्रतिरोध का स्वर भी हैं। प्रवासी पुरुष की मानसिक पीड़ा को साझा कर ये गीत उसे अकेला नहीं रहने देते। सामूहिक गायन की परंपरा पीड़ा को सामाजिक अनुभव में बदल देती है, जिससे मानसिक बोझ कुछ हद तक हल्का होता है।

हालाँकि भोजपुरी लोकगीतों में स्त्री का स्वर अधिक मुखर है, पर पुरुष प्रवासी की पीड़ा भी परोक्ष रूप से अभिव्यक्त होती है। परदेस में वह कठोर श्रम, अपमान और असुरक्षित जीवन से जूझता है।

लोकगीतों में संकेत मिलता है कि प्रवासी पुरुष अपनी पहचान खोता जा रहा है। वह गाँव में पति और पिता है, पर परदेस में केवल मजदूर। यह पहचान-संकट उसकी मानसिक स्थिति को गहराई से प्रभावित करता है (Williams 181)।<sup>17</sup>

### पारिवारिक विघटन और भावनात्मक दूरी

प्रवासन ने भोजपुरी समाज की पारिवारिक संरचना को भी प्रभावित किया। लंबे समय तक पति-पत्नी का अलगाव, बच्चों का पिता से दूर पालन-पोषण और बुजुर्गों की उपेक्षा—ये सब लोकगीतों में प्रतिध्वनित होते हैं।

गीतों में बार-बार “चिड़ी” और “संदेश” का उल्लेख मिलता है, जो दूरी को पाटने का एकमात्र साधन है। आधुनिक काल में मोबाइल और पैसे भेजने जैसे प्रतीक जुड़े, पर भावनात्मक दूरी बनी रही।

### सांस्कृतिक विघटन और पहचान का संकट

प्रवासन से मनुष्य का विस्थापन के साथ संस्कृति और पहचान भी डगमगा जाता है। भिखारी ठाकुर के गीतों में परदेसिया जब गाँव लौटता है, तब वह बदलते मूल्य और आदत के साथ आता है, जो पारिवारिक टकराव को जन्म देता है। इस स्थिति में गाँव-शहर द्वंद्व स्पष्ट हो जाता है। भिखारी ठाकुर इस टकराव को लोकभाषा की सहज प्रतीक से उजागर किये हैं (सिंह 78)।<sup>18</sup> प्रवासन केवल आर्थिक क्रिया नहीं, बल्कि सांस्कृतिक विस्थापन भी है। परदेस में प्रवासी अपनी भाषा, त्योहार और लोकाचार से एकटता जाता है। भोजपुरी लोकगीत इस चिंता को गहराई से व्यक्त करते हैं।

इन गीतों में यह भय झलकता है कि कहीं परदेस जाकर व्यक्ति अपनी जड़ों को न भूल जाए। लोकगीत इस सांस्कृतिक विस्मृति के विरुद्ध स्मृति का कार्य करते हैं (Tiwari 102)।<sup>19</sup>

### औपनिवेशिक से उत्तर-औपनिवेशिक काल तक प्रवासन

औपनिवेशिक काल में प्रवासन शोषण की संरचना से जुड़ा था, जबकि उत्तर-औपनिवेशिक काल में यह विकास के असंतुलन से जुड़ गया। फर्क केवल इतना है कि पहले मजबूरी अधिक स्पष्ट थी, अब उसे “अवसर” कहा जाने लगा है।

भोजपुरी लोकगीत इस परिवर्तन को पहचानते हैं, पर पीड़ा को वही पाते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि आर्थिक विकास के दावे मानवीय अनुभव से मेल नहीं खाते (Pandey 207)।<sup>10</sup>

### लोकगीतों में प्रतिरोध और आशा

भोजपुरी लोकगीत केवल दुख की अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि प्रतिरोध की भाषा भी हैं। स्त्री व्यवस्था पर प्रश्न उठाती है, समाज की चुप्पी को चुनौती देती है और एक ऐसे भविष्य की कल्पना करती है जहाँ प्रवासन मजबूरी न हो।

यह प्रतिरोध शांत है, पर गहरा है। लोकगीतों में निहित यही चेतना उन्हें आज भी प्रासंगिक बनाती है।

### निष्कर्ष

भोजपुरी लोकगीतों में प्रवासन की पीड़ा केवल अतीत की कथा नहीं, बल्कि एक सतत सामाजिक यथार्थ है। ये गीत हमें बताते हैं कि विकास की किसी भी प्रक्रिया का मूल्यांकन केवल आर्थिक सूचकों से नहीं किया जा सकता।

प्रवासन ने भोजपुरी समाज को जीवित रखा, पर उसकी कीमत भावनात्मक और सांस्कृतिक स्तर पर चुकानी पड़ी। लोकगीत इस कीमत का मानवीय लेखा-जोखा हैं।

इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भोजपुरी लोकगीत न केवल पीड़ा की अभिव्यक्ति हैं, बल्कि सामाजिक चेतना, सांस्कृतिक स्मृति और प्रतिरोध की जीवंत परंपरा भी हैं।

### संदर्भ

1. Pandey, Gyanendra. *The Construction of Communalism in Colonial North India*, Oxford University Press, 1990.
2. भगत, वजेन्द्र ‘मधुकर’. मधुबहार. भोजपुरी आकदमी, पटना, 1985.
3. Tiwari, Vishwanath. *Lokgeet aur Samaj*. Rajkamal Prakashan, 2012.
4. Shukla, Shailendra Kumar. “Migration and Folk Consciousness in Bhojpuri Songs.” *Indian Folklore Research Journal*, vol. 12, no. 2, 2016, pp. 45–62.
5. Prasad, Ramashankar. *Bhojpuri Lok Sahitya*. Bihar Rashtrabhasha Parishad, 2008.
6. Shukla, Shailendra Kumar. “Migration and Folk Consciousness in Bhojpuri Songs”, *Indian Folklore Research Journal*, vol. 12, no. 2, 2016, pp. 45–62.
7. Williams, Raymond. *Culture and Society 1780–1950*. Columbia University Press, 1983.
8. सिंह, विजय कुमार. भोजपुरी लोकगीतों की संवेदना. गोरखपुर, पूर्वाञ्चल साहित्य केंद्र, 2017.
9. Tiwari, Vishwanath. *Lokgeet aur Samaj*, Rajkamal Prakashan, 2012.
10. Pandey, Gyanendra. *The Construction of Communalism in Colonial North India*. Oxford University Press, 1990.